5

बच्चों में नेतृत्व क्षमता और जवाबदेही

यशस्वी द्विवेदी*

मैं पिछले कुछ समय से इन्हीं उद्देश्यों को ध्यान में रखकर अहमदाबाद के महात्मा गाँधी आश्रम विद्यालय में जा रही हूँ। स्कूल में बच्चे विविध क्रियाकलापों में ज़्यादा-से-ज़्यादा भागीदारी कर सकें और आपस में एक-दूसरे से सीख सकें। यह हमेशा से ही मेरी रुचि एवं उत्साह का विषय रहा है। मैंने स्कूल में एक प्रोजेक्ट की शुरुआत की जिसका विषय था –'बच्चे अपनी प्रार्थना-सभा का प्रारूप स्वयं निर्धारित करें'। प्रधानाचार्या ने जब मेरे विचारों से सहमति जताई तो मैं कक्षा छठवीं, सातवीं और आठवीं के बच्चों के साथ काम में जुट गई। बाल-मनोविज्ञान की गहराई में न जाते हुए, जल्द ही मुझे इस बात का अहसास हुआ कि इन कक्षाओं में प्रमुख रूप से चार-पाँच किस्म के बच्चे नज़र आते हैं। मैं इन्हें अपनी ओर से सुविधा के लिए कुछ नाम देती चलती हूँ। जैसे –

1. उत्साहित बच्चे – जो विविध गतिविधियों में खुद से आगे आते हैं।
2. शर्मीले बच्चे – जो काफ़ी प्रयास के बाद भी सामने आने को तैयार नहीं हुए।
3. शर्मीले किंतु भागीदारी के इच्छुक बच्चे – जो शर्मीले थे मगर उनसे बातचीत करने, उनकी रुचिनुसार कार्य होने, दूसरे बच्चों द्वारा उत्साहित करने व उन्हें अवसर देने की वजह से सामने आए।
4. उत्साहित किंतु भागीदारी के बाद हतोत्साहित बच्चे- जो उत्साह से आगे आते हैं लेकिन सबके सामने उनकी छोटी-सी भी गलती बताए जाने के बाद खुद को आगे लाने में कतराने लगते हैं।
5. कुछ ऐसे बच्चे जो विविध गतिविधियों में काफ़ी बढ़-चढ़कर हिस्सा लेते हैं और अपना स्थान किसी अन्य बच्चे को देना ही नहीं चाहते।

अब मैं बच्चों के साथ अपने कुछ अनुभव आपसे साझा करना चाहूँगी।

प्रार्थना-सभा की तैयारी

प्रार्थना-सभा की शुरुआत कक्षा-8 से हुई जिसमें अजय, उर्वशी (एंकरिंग), शैलेश, किरण (योग) खुद से आगे आए। हमने कक्षा में एक बड़े गोले

* एकलव्य द्वारा प्रकाशित *शैक्षणिक संदर्भ* (जनवरी-फरवरी 2013) से साभार

में बैठकर बातचीत की। इन बच्चों ने प्रारंभ से अंत तक खुद ही ज़िम्मेदारी ली।

हिम्मत, कोमल और कुछ अन्य बच्चों से बातचीत की गई। हिम्मत ने काफ़ी देर बाद बताया कि उसकी रुचि डायलॉग में है, परंतु वह कार्यक्रम में हिस्सा लेने के बारे में अंत तक हाँ–ना करता रहा। वहीं कुछ अन्य बच्चे बात करने के लिए भी सामने नहीं आ रहे थे।

रवि, ध्वनि, आशा, अनीता भी काफ़ी शरमा रहे थे, किंतु बातचीत करने और प्रोत्साहित करने पर उन्होंने अपनी रुचि ब्रेक–डांस, गीत, अभिनय–गीत में ज़ाहिर की और खुद से प्रैक्टिस भी करने लगे। ये ऐसे बच्चे थे, जिन्होंने अब तक प्रार्थना–सभा में कभी भी हिस्सा नहीं लिया था।

इस बातचीत से मुझे समझ आ रहा था कि बच्चों को अवसर देने की शुरुआत उनकी रुचि को ध्यान में रखकर की जाए तो बच्चों का स्वयं में विश्वास बढ़ने लगता है और बच्चे थोड़ा समग्रता से सोचने लगते हैं। यहाँ मैं रवि के बारे में बताना चाहूँगी।

रवि को ब्रेक–डांस करना बहुत अच्छा लगता है (बातचीत के दौरान मालूम हुआ कि वो घंटों टीवी के सामने खड़े होकर डांस सीखता है)। रवि ने सब बच्चों के साथ मिलकर अगले दिन होने वाली सभा के कार्यक्रम की रूपरेखा तय की। शुरुआत ब्रेक–डांस से होना निश्चित हुआ था। रवि डांस की बारी की तलाश में कभी अपने कक्षा शिक्षक तो कभी दूसरे शिक्षकों से पूछताछ कर रहा था कि क्या किसी के मोबाइल पर ऐसा कोई गीत है। यह पूछताछ भी आगे आकर ज़िम्मेवारी उठाने का संकेत थी, क्योंकि जो बच्चा सिर्फ़ अपने काम तक सीमित था, वो आज अलग–अलग लोगों से खुद बात कर रहा था। रवि स्कूल की छुट्टी के बाद तक प्रैक्टिस कर रहा था। साथ ही वो कक्षा छह और सात के बच्चों की भी मदद कर रहा था, चाहे वो 'देशभक्ति गाना' हो या फिर 'नानी ढिंगली सोहाय, लटका–मटका करती जाए' वाला अभिनय–गीत क्यों न हो।

इसी तरह आशा अभिनय–गीत करना चाहती थी मगर अकेले नहीं उसे कोई जोड़ीदार चाहिए था, दूसरा उलझाव यह था कि जो अभिनय–गीत आशा को आता था उसकी प्रस्तुति पहले भी कई बार हो चुकी थी। बच्चे प्रार्थना सभा में नयी प्रस्तुतियाँ देना चाहते थे। एक ओर इस पुराने गीत पर कक्षा का कोई बच्चा आशा का साथ देने के लिए तैयार नहीं हो रहा था, वहीं आशा अडिग थी कि अगर अभिनय करेगी तो इसी गीत पर और वो भी किसी के साथ। आखिरकार आशा ने ही इसका विकल्प खोजा और सातवीं कक्षा की अनीता के साथ प्रैक्टिस करने लगी। इसी तरह बच्चों ने काफ़ी प्रयास के बाद कार्यक्रम की रूप–रेखा तय कर ली।

प्रस्तुतियाँ और कुछ सवाल

जब बच्चों ने खुद से आयोजित की गई प्रार्थना–सभा में कार्यक्रम प्रस्तुत किए तो यह हर शिक्षक के लिए आश्चर्यपूर्ण नज़ारा था क्योंकि पहले कभी ये सोचा ही नहीं गया था कि प्रार्थना–सभा में बच्चे ऐसा कुछ भी कर सकते हैं।

जो बच्चे अकसर मंच पर दिखाई देते थे, उनके अलावा कुछ और बच्चों के आगे आने और उनकी प्रस्तुति को लेकर मैं शिक्षकों के चेहरों पर सवालिया निशान देख पा रही थी, क्योंकि ये वे बच्चे थे जो कुछ करना चाहते थे मगर इन्हें खुद को आज़माने का मौका कभी नहीं मिला था।

ज़ाहिर-सी बात है कि इन बच्चों ने जब अपना कार्यक्रम प्रस्तुत किया तो कुछ कमियाँ रह गई थीं, जो पहली बार करने की वजह से जायज़ थीं। लेकिन किसी प्रस्तुति में कमी रिहर्सल पर्याप्त न होने के चलते रही हो, ऐसा भी नहीं था। कुछ एक में तकनीकी कारण भी थे। अगले एक-दो उदाहरणों से हम इसे समझ सकते हैं।

पहली बार एंकरिंग करते हुए शनि थोड़ा घबराया हुआ था। बच्चों को स्टेज पर बुलाने पर बच्चों का देर से आना उसे गुस्सा दिला रहा था। इसी तरह पहली बार प्रस्तुति दे रहे मेहुल का ब्रेक-डांस शुरू होने से ठीक पहले मोबाइल फ़ोन बंद हो जाने की वजह से उसने तुरंत बिना रिहर्सल दूसरे गाने पर डांस किया और बीच में अपने डांस से असंतुष्ट होकर मंच छोड़ दिया।

इस प्रार्थना सभा के बाद ज़्यादातर शिक्षकों ने अपनी कक्षाओं में बच्चों की प्रस्तुतियों में रही कमी-बेशियों को सुधारने की नियत से कक्षा में बच्चों से बातचीत की। इसी तरह प्रस्तुतियों को लेकर साथियों द्वारा मज़ाक उड़ाए जाने के वाकिए भी सामने आए। इन सबका मिलाजुला असर यह हुआ कि कुछ बच्चे इतने ज़्यादा उदास और हतोत्साहित हुए कि उन्होंने ठान लिया कि वे आगे से किसी कार्यक्रम में हिस्सा नहीं लेंगे। इस सबकी वजह से हमारे लिए ज़रूरी हो गया कि बच्चों से बातचीत करके मसले का हल निकाला जाए। जब बच्चों से बात हुई तो कई सारी बातें अनकहे सवालों के रूप में सामने आईं। सबके सामने गलतियों का अहसास करवाना बच्चों को ठीक नहीं लग रहा था। प्रधानाचार्या ने खुद उन बच्चों से व्यक्तिगत तौर पर बातचीत की, जो काफ़ी सहायक साबित हुई।

बच्चों में नेतृत्व क्षमता और जवाबदेही

तीन अलग-अलग कक्षाओं और शिक्षकों के साथ काम करने से कुछ बातें सामने आ रही थीं जिसमें 'तीनों शिक्षकों का उत्साह' प्रमुख था। इस उत्साह में अंतर की वजह शिक्षकों के नज़रिए से जुड़ी थी, जिसमें इस तरह से समझा जा सकता है –

(क) शिक्षक का इस कार्यक्रम के उद्देश्य को समझकर, इस प्रक्रिया का हिस्सा बनना। इस नज़रिए से जुड़े शिक्षक, शर्म की वजह से हिस्सा न के बराबर लेने वाले बच्चों को उत्साहित करने और अन्य विकल्पों को सोचने का अवसर प्रदान कर पा रहे थे, जिससे बच्चे पूरी स्वतंत्रता और रुचि से आगे आ रहे थे। ऐसे शिक्षक प्रार्थना-सभा खत्म होने के बाद सारे बच्चों के साथ उनके प्रदर्शन पर कि क्या अच्छा हुआ और इसे कैसे और अच्छा किया जा सकता था आदि पर बातचीत करते थे जिससे बच्चों का उत्साह एवं खुद पर विश्वास बढ़ने लगता है।

(ख) कुछेक शिक्षक उत्साह से भरे थे, मगर

उद्देश्य समझे बिना प्रक्रिया में भागीदारी करना सिर्फ़ एक्टिविटी तक ही सीमित रह गया। इनसे भी सारे बच्चों की ऊर्जा को आगे लाने की कोशिश अपेक्षित थी। इन शिक्षकों द्वारा बच्चों को तो प्रेरित किया जा रहा था, लेकिन अभी भी वही बच्चे आगे आते दिखाई दे रहे थे जो हमेशा आगे दिखाई देते थे।

बच्चे जब स्कूल में स्वयं से इतनी सारी चीज़ें कर रहे थे तो पूरा वातावरण काफ़ी सृजक, उत्सुकता भरा एवं खुद की रुचि को जानने-जगाने वाला बन गया था। ऐसा अकसर जहाँ प्रयोग के लिए बच्चों से लेकर हर कोई तैयार था। बच्चे सुबह-सुबह जल्दी स्कूल आते थे, आकर अपने समूह के बच्चों को इकट्ठा करना, दरी बिछाना, माइक लगाना, सारे बच्चों को प्रार्थना के लिए प्लान के मुताबिक बैठाना आदि में जुट जाते थे। यह सब शिक्षकों और प्रधानाचार्या के कौतूहल को बढ़ाने वाला था। एक और रोचक बात थी कि कक्षा-शिक्षक भी अपनी कक्षा के बच्चों के साथ पूरा साथ निभा रहे थे, जिससे बच्चों का उत्साह बढ़ रहा था। एक मौके पर कक्षा सात की शिक्षिका अपने बच्चों के साथ शुरू से अंत तक मंच पर थी और बाद में वो भी बच्चों के साथ डांस में शामिल हो गई। इसी तरह आठवीं के बच्चे सातवीं के बच्चों को सपोर्ट करने के लिए खुद आगे आ रहे थे।

तीनों कक्षाओं के साथ काम करते हुए मेरा सामना कुछ चुभते सवालों से होता रहा है। इनमें से कुछ मैं विचारार्थ रख रही हूँ।

(क) हमेशा 'अच्छे' बच्चे ही क्यों चयनित हों?

अकसर ऐसे सब कार्यक्रमों के लिए पहले भी चयनित किए जा चुके बच्चों को ही चुना जाता है। शायद इसके पीछे यही सोच है कि जो बच्चे काफ़ी समय से अच्छा करते आ रहे हैं, वही बच्चे आगे भी अच्छा कर पाएँगे। मगर इसका दूसरे बच्चों पर क्या प्रभाव पड़ता है, उसका एक उदाहरण प्रस्तुत है।

हुआ कुछ यूँ कि छठी कक्षा में जब कुछ शर्मीले बच्चे एंकरिंग के लिए सामने आए तो टीचर ने उन्हें यह कहकर बैठा दिया कि रितु ही एंकरिंग करेगी क्योंकि वो स्पष्ट, तेज़ और अच्छा बोलती है। यह सुनकर 2-3 बच्चे वापस बैठ गए मगर एक बच्ची बार-बार दबी आवाज़ में बोल रही थी कि वो एंकरिंग करेगी। लेकिन हर बार टीचर के द्वारा एक ही बात दोहराने पर वो कुछ पूछ बैठी, ''टीचर क्या हम अच्छा नहीं बोलते?''

यह सुनकर कुछ देर चुप रहकर टीचर बोली, ''सब अच्छा बोलते हो। चलो प्रैक्टिस करके बताओ।'' बच्ची ने पहला शब्द बोलना शुरू ही किया था कि टीचर ने बहुत ही अजीब तरीके से उसे सुधारने को कहा। टीचर का रवैया देखकर उस लड़की ने दूसरी लड़की को कॉपी थमा कर कहा, ''तुम करो, मैं नहीं कर सकती।'' मुझे लगता है कि शिक्षक के द्वारा विश्वास दिखाए जाने मात्र से ही अब तक मौका न पा सके बच्चे भी बेहतर कर सकते हैं।

(ख) कुछ बच्चों के लिए कुछ लेबल चस्पा कर दिए जाते हैं। इसका आधार क्या है और इस पर कैसे विचार किया जा सकता है?

अकसर स्कूल में जब बच्चों को आवारा, शैतान, शांत, घुमंतू, नासमझ आदि नामों से हमेशा के लिए नत्थी कर दिया जाता है तो शिक्षक के साथ-साथ बच्चा भी स्वयं को उसी संज्ञा से पहचानने लगता है। लेकिन कोई भी लेबल चिपकाने से पहले उस बच्चे, उस इंसान के बारे में जानने की कोशिश की जाए, क्या यह ज़रूरी नहीं लगता?

जैसे प्रधानाचार्य ने बताया कि उनकी निगाह में रवि बहुत ही शर्मीला, सिर्फ़ खुद तक ही सीमित रहने वाला लड़का था। मगर उसकी प्रस्तुति के बाद पता चला कि रवि के अंदर क्या-क्या गुण हैं, वो खुद से इतना आगे आकर अन्य बच्चों को सपोर्ट कर सकता है।

(ग) बच्चे शर्माते क्यूँ हैं?

बच्चों के संदर्भ में कई बार ये बातें आईं चाहे वो उनकी भागीदारी को लेकर हो, लड़का-लड़की साथ में बैठने की, या साथ में कुछ करने की ही बात क्यूँ न हो। बच्चे शर्माते हैं। हमारी बच्चों-शिक्षकों से हुई बातचीत में यह बात भी उभरकर आई कि जब हम एक ही कक्षा में एक ही टीचर के साथ पढ़ते हैं, घर पर अपने आसपास के लड़के-लड़कियों के साथ खेलते हैं तब तो नहीं शर्माते, तो स्कूल में क्यूँ शर्माते हैं? अभी भी मैं इस पहलू को गंभीरता से समझना चाहती हूँ।

(घ) हमेशा प्रतियोगिता के रूप में ही प्रशंसा क्यों ज़रूरी है?

अकसर शिक्षकों और बच्चों की तरफ़ से ज़्यादा तारीफ़ उसी बच्चे की होती थी जो सबसे अच्छा करता था। इस वजह से दूसरे बच्चे पर क्या असर हो रहा है, हम इसका ध्यान बिल्कुल भी नहीं रखते।

चुनौतियों के साथ बढ़ते कदम

रास्ते में आने वाली चुनौतियों ने ही मेरा हौसला बढ़ाया, जैसे कि शुरुआती दिन की प्रार्थना-सभा को मैं कभी नहीं भूल सकती। जब 40 मिनट की सभा बड़ी मुश्किल से सिर्फ़ 15 मिनट में रूखे-सूखे तरीके से खत्म हो गई थी।

कभी-कभी लगता था कि कहीं यह सब महज़ खानापूर्ति बन कर न रह जाए। प्रार्थना-सभा के व्यवस्थागत और वैयक्तिक मुद्दे भी कुछ कम नहीं हैं। प्रतिभागियों का स्कूल नहीं आना या फ़िर देर से आना, तो कभी पहले से तैयार किए गए बच्चों की जगह दूसरे बच्चों का आकर वो काम करने लगना, ऐन मौके पर बच्चों का कहना कि जो उन्हें बोलना है वो तैयार ही नहीं हो पाया है अब क्या करें और जब कुछ बच्चे नहीं आए तो दूसरे बच्चों का कहना कि सब कैंसिल कर दीजिए, कुछ नहीं होगा। मगर इन सबके बावजूद बहुत कुछ हो पाया, जब बच्चों ने अपनी ज़िम्मेदारियाँ समझनी शुरू कर दीं।

कैसी लगी प्रार्थना सभा?

बच्चों ने प्रार्थना-सभा के अंत में सभा कैसी लगी, यह जानने के लिए कुछ नायाब तरीके खोज निकाले। इसके लिए बच्चों ने छुक-छुक ट्रेन का विचार रखा जो सबके पास जाएगी और 'सभा कैसी लगी' यह पूछने के बाद उन्हें अपनी ट्रेन में शामिल कर के आगे बढ़ जाएगी-दूसरों से पूछने के लिए। सातवीं के बच्चों ने भी एक अनोखा तरीका अपनाया। वे अलग-अलग पंछियों की आवाज़ तीन बार निकालकर सबसे प्रार्थना सभा के बारे में पूछेंगे।

बच्चों ने खुद से स्कूल के सभी बच्चों को प्रार्थना-सभा में कैसे बैठना है, इसके बारे में भी मिलकर काफ़ी तार्किक रूप से सोचा, जैसे छोटे बच्चे कहाँ, बड़ी कक्षा कहाँ बैठेगी आदि। जब योग करवाते समय बाकी बच्चों को शामिल नहीं कर पा रहे थे, तो व्यवस्था बनाने वाले बच्चों का तर्क था कि यदि अन्य बच्चों को शामिल होने को कहा जाता तो उन्हें चोट भी लग सकती थी, वो गिर भी सकते थे। यह देख-सुनकर बच्चे खुद से सोच सकते हैं, इस पर मेरा भरोसा और बढ़ा।

जब बच्चों से बात की गई कि उन्हें कैसा और क्या लगा तो उन्होंने बहुत सारी बातें बतलाईं- जैसे कि उनका भय, हिचक काफ़ी कम हो गई है, अब वे कहीं भी सबके सामने खड़े होकर बोल सकते हैं, जब उनको मन-पसंद काम करने का मौका मिला तो वो अपनी प्रतिभा को समझ पाए और उन्हें अपने दोस्तों के बारे में भी पता चला कि सबको क्या-क्या आता है। उन्होंने एक-दूसरे की काफ़ी प्रशंसा भी की। जो बच्चे किन्हीं वजहों से हतोत्साहित हो गए थे, दोबारा उनका आगे आना मेरे लिए एक सुखद अनुभूति देने वाला था।